हिन्दी उपन्यासोंमें यांत्रिकीकरण के दुष्प्रभाव का अध्ययन

डॉ. विकास विठ्ठलराव कामडी
हिन्दी विभाग प्रमुख,
सेठ केसरीमल पोरवाल, कला, विज्ञान,
वाणिज्य महाविद्यालय, कामठी, नागपुर
९०९६१७२२९३,
vikaskamdi7@gmail.com

आधुनीक युग कि देन यांत्रिकीकरण या औद्योगीकरण है। यात्रिंकीकरण को विज्ञान की एक खोज माना जाता है। वैज्ञानिक प्रगति के कारण ही नई–नई मशीने, नये–नये कारखानों का निर्माण हुआ है। आज हल के स्थान पर ट्रैक्टर आ गये, जो कम समय में अधिक काम कर सकते हैं। औद्योगीकरण के संबंध में डॉ.गंगाप्रसाद विमल कहते है –''औद्योगीकरण एक तरह से सतत् नए होते जाने की प्रक्रिया है। पुराना पड़ जाना, मृत हो जाना है। मृतावशेशों को छोड औद्योगीकरण निरंतर अपना कलेवर तकनीकी नए पन के साथ–साथ बदलता रहता है।''[१]

परंपरागत समाज की इकाईयों पर यांत्रिकीकरण ने सीधे प्रहार किया है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों की इकाईयों में ऱ्हास आया है। बडे पैमाने पर ग्रामीण आधुनिक इकाईयाँ न सिर्फ खत्म होने लगी, अपितु उनकों चलानेवाले लोगों के लिए अपने अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न उत्पन्न हुआ है। आज ग्रामीण क्षेत्रों में जो लघु इकाईयाँ जीवित हैं, वे लोगों को आय का रोजगार देने में असमर्थ हैं। औद्योगीकरण के ग्रामीण व्यवस्था की उत्पीडक स्थिति के सम्मुख, किसानके आगे मजदूर होने का विकल्प रखा है। औद्योगीकरण की इस समस्या को 'रंगभूमि' उपन्यास में देखा जा सकता है। किसान और मजदूर के बीच के द्वंद्व को 'गोदान' उपन्यास में देखा जा सकता है। जहाँ होरी भोशण चक्र के तले पिसते–पिसते कृशक से मजदूर यानी हल जोतने से पत्थर तोडने वाला बनने के लिए विवश हो जाता है।

यांत्रिकीकरण से तेजी से औद्योगीकरण बढ़ा है। औद्योगीकरण के कारण शहरीकरण तेजी से होने लगा। ग्रामीणों का स्थानांतरण होने लगा। शहरीकरण ने समाज को किस रूप में प्रभावित किया इस बारे में डॉ. मैथिली प्रसाद भारद्वाज लिखते है कि ''शहरीकरण का तात्पर्य मुख्य या एकांतीक रूप में कृषि निर्भर लघु समाजों से लोगों का उन वृहत्तर समाजों में स्थानांतरण है, जिनका कार्य देश, प्रशासन, व्यापार, उद्योग तथा उनसे संबद्ध रूचियों से परिवर्तित हो जाता है।''[२]

औद्योगीकरण की क्रांति से भारत ही नहीं, पर विश्व की विशिष्ट संस्कृति को उद्वेलित और प्रभावित किया है। उपभोक्तावाद को इस क्रांति ने बल दिया है। औद्योगिक क्षेत्र मे मशीनों ने संपूर्ण वातावरण को प्रदूषित किया। अनेक उद्योगों के शुरू हो जाने से मानव को सुख की प्राप्ति हुई। वह पुराने ढाँचे वाले जीवन से बाहर निकलकर सुखी जीवन जीने के लिए औद्योगिक नगरों की और दौड़ पडा। उद्योंगो के बडे–बडे कारखानों के स्थापित हो जाने से नगरों की भी स्थापना हुई। धन कमाने, सुखी जीवन व्यतीत करने के लिए मनुष्य गाँवों को छोडकर शहरों में बसने लगा। गाँवों का सुखद एवं स्वास्थ्यप्रद पर्यावरण छोडकर लोग शहरों में बसने लगे तो अपने संस्कारों से भी दूर होते गये।

मानव की जगह आज मशीनों ने ली है। मनुष्य आरामतलब होता जा रहा है। बाजारवाद, उपभोक्ता संस्कृति का निर्माण हुआ। इसका परिणाम हिन्दी उपन्योसों पर भी हुआ है। हिन्दी उपन्यासों में प्राकृतिक असंतुलन, यांत्रिकीकरण के दुष्प्रभाव, सांस्कृतिक परिवर्तन, प्रदूषण, बेरोजगारी, भूमिहर किसानों की समस्या, हमें दिखाई देती है। अलका सरावगी के उपन्यास 'कलि–कथा: वाया बाईपास' में किशोर बाबू की पत्नी विचित्र घटनाओं के बारे में विचार करती है, तो वह घटना उसके सामने प्रत्यक्ष रूप ले लेती है। वह पृथ्वी को बचाने के बारे में कहती है ''पृथ्वी को बचाने का अब एक ही तरीका था कि आदमी का श्रम सारी मशीनों की जगह ले और श्रम अधिक–से–अधिक हरियाली के उत्पादन में लगे–ऐसी हरियाली जिसमें किसी तरह के रसायन का प्रयोग न हो। अब पेड़–पौधों से उत्पन्न होनेवाली आक्सीजन ही इस पृथ्वी को बचा सकती थी। यह सूचना दुनिया में फैलाने के लिए अब न कम्प्यूटर, टी.वी.और अखबार की जरूरत थी और न हवाई–जहाज, जलयानों और रेलों की। यह बात ऐसी थी जिसे बच्चा–बच्चा अपने अंदर समझ गया था।''[३]

यांत्रिकीकरण अब शहरों के साथ–साथ गाँवों तक आ पहुँचा है। यांत्रिकीकरण के प्रभाव के बारे में काशीनाथ सिंह ने अपने उपन्यास 'काशी का अस्सी' में भी लिखा है। वे कहते है –''इश्वर देख रहा था कि पूरे मुल्क में बनी–जगह –जगह बनी फैक्टरियों और मिलों ने आसमान को धुआँ–धुआँ कर रखा है, हवाएँ दिनों–दिन गन्दी और बदबूदार होती जा रही हैं, नदी–नालों का पानी जहरीला होता जा रहा है, दिन–रात बजनेवाले भोंपू, लाउडस्पीकर, रेडियों, ट्रांजिस्टर, हार्न, चिल्ल–पों अन्तरिक्ष को गूँगा और बेजान बना रहे हैं।''[४]

मनोज रूपड़ा का उपन्यास 'प्रतिसंसार' इ.स. २००८ में प्रकाशित हुआ। इस में भूमंडलीकरण, विस्फोटक सूचना क्रान्ति, बाजारवाद, यांत्रिकीकरण के दुश्प्रभावों को दर्शाया है। उपन्यास का पात्र आनन्द विचार करता है कि यह कचरा आखिर कहाँ से आता है –''सडक के दोनों ओर गैरज और वर्कशॉप की लम्बी श्रृंखला थी। बीच–बीच में लेथ, बाइंडिंग, वेल्डिंग और फेब्रिकेशन वर्क्स के कई छोटे–बडे शेड़ थे। और फिर एक जनरल ट्रेक शॉट में हम एक बहुत बड़े कबाडखाने को देखते हैं, जिसमें हजारों अंगड–खंगड सामानों के साथ जंग खायी मशीनरी के सैकडों ध्वस्त ढाँचे और औल्ड टेक्नोलॉजी और पुराने मॉडलों के कंकाल चारों तरफ बिखरे दिखाई देते है। फिर एक जीवित मशीन पर कैमरा स्टील होता है। ऊपर एक दैत्याकार मशीन वहाँ चल रही थी। दैत्याकार चक्के घूम रहे थे। दस–दस फिट लम्बे और उतने ही चौडे, विशाल ऑटोमेटिक हथौडे जबर्दस्त आवाज के साथ गिर रहे थे। विशाल क्रेनें चीखते और गुर्राते हुए अपने पंजे आगे बढाती थीं और लोहें के मृत ढाँचों को झपटकर उठा ले जाती थीं। वे उन्हें विशाल हथौडों के नीचे पटक देती थीं और हथौडे किसी मध्ययुगीन जल्लाद की तरह उन पुर्जो का कचूमर कर डालते।''[५]

मनोज रूपड़ा अपने उपन्यास के द्वारा बढती बेरोजगारी, नयी टेक्नोलॉजी के निर्माण के कारण घटती मजदूरों की संख्या, इन समस्याओंको दर्शाना चाहते है। आनन्द जब अपने पिता से पूछता है कि आपके साथ मजदूर क्यों नही है? तब आनन्द के पिता कहते है –''वे हमारे साथ कभी नहीं चल सकते, उन्होंने सिर्फ विरोध करना सीखा है, वे सिर्फ विरोध करना जानते हैं। विरोध के जाये उनके संगठन अपनी नासमझी में मुट्ठियाँ भींचकर नारे लगाते रहेंगे और एक दिन हाथों की उपयोगिता समाप्त हो जाएगी, क्योंकि हम लगातार नयी टेक्नोलॉजी की तरफ बढ़ रहे है। कुछ ही समय में हमारे पास आदमी के बदले

ऐसी मशीनें होंगी जो न कभी थकेंगी, न गलतियाँ करेंगी, न नारे लगाएँगी, न विरोध करेंगी... तब हम जिन्दा मजदूरों की गुलामी से आजाद हो जाएँगे।''[६]

ममता कालिया का उपन्यास 'दौड़ औद्योगिकरण, बाजारवाद के खतरों से अवगत कराता है। ''आर्थिक उदारीकरण ने भारतीय बाजार को शक्तिशाली बनाया । इसने व्यापार प्रबन्धन की शिक्षा के द्वार खोले और छात्र वर्ग को व्यापार प्रबन्धन में विशेषता हासिल करने के अवसर दिए। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने रोजगार के नए अवसर प्रदान किए। युवा–वर्ग ने पूरी लगन के साथ इस सिमसिम द्वार को खोला और इसमें प्रविष्ट हो गया। वर्तमान सदी में समस्त अन्य वाद के साथ एक नया वाद आरम्भ हो गया, बाजारवाद और उपभोक्तावाद।''[७] औद्योगिकरण से छोटे शहरों की युवा पीढ़ी बडे शहरों में रोजगार की तलाश में आयी। इस कारण से माँ–बाप अकेले रहने लगे। सीनियर सिटिजन में अकेलेपन की समस्या निर्माण हुयी। पवन जब सघन को कहता है की तुम मेरे साथ राजकोट चलो, तो पवन पर माँ नाराज हो जाती है–''इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले रह जाएँगे। वैसे ही यह सीनियर सिटिजन कॉलोनी बनजी जा रही है। सबके बच्चे पढ–लिखकर बाहर चले जा रहे हैं। हर घर में समझों एक बूढा, एक बूढी, एक कुत्ता और एक कार बस यह रह गया है।''[८]

शहरों में औद्योगीकरण से यांत्रिक प्रदूषण बढ रहा है। वाहनों से निकलने वाला धुआँ स्वास्थ्य के लिए जहरीला व घातक सिद्ध हो रहा है और कम्पनियाँ हवा शुद्धिकरण संयंत्र बनाकर और भी प्रदूषण बढा रही है। उपन्यास का पात्र राजू कहता है कि, ''माई फुट! तुम तो मेरे जाँब को ही चुनौती दे रहे हो। मेरी कम्पनी को इससे मतलब नहीं है कि वाहन धुएँ के बगैरे चलें। उसकी योजना है हवा शुद्धिकरण संयंत्र बनाने की। एक हर्बल स्प्रे भी बनाने वाली है। उसे एक बार नाक के पास स्प्रे कर लो तो धुएँ का प्रदूषण आपकी साँस के रास्ते अन्दर नहीं जाता।''[९]

विनोद कुमार शुक्ल का उपन्यास 'दिवार में एक खिड़की रहती थी' में लेखक ने ग्रामीण परिवेश के साथ यांत्रिकरण के प्रभाओंको भी दर्शाया हे। बडे–बडे यांत्रिक मशीनों से नदी से रेत निकाली जाती है इससे काफी समस्याओं का सामना करना पडता है। उपन्यास का नायक रघुवर प्रसाद यह दृश्य देखता है की, ''एक ट्रक आ रहा था । ट्रक में रेत भरी थी। नदी की चमकती रेत थी। बरसात में नदी भरने लगती तब रेत निकालना मुश्किल हो जाता। तब खदान की रेत निकाली जाती थी। खदान की रेत साफ–सुथरी नहीं होती थी। अधिक बरसात में रेत बहुत महँगी हो जाती। बरसात आने में अभी डेढ. महीना था। ''[१०]

रणेन्द्र का उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' में बताया गया है कि, यांत्रिकीकरण के कारण लोगों की भूमि छिन ली गई है। वहाँ से कोयला निकाला जा रहा है। जिससे किसान खेती नहीं कर पार रहे है। कम्पनीयाँ भोले–भाले लोगों की जमीन हथियाकर वहाँ से कोयला, बॉक्साइड निकालना चाहती है। उपन्यास के पात्र लालचन दा और रूमझुम कहते है –''रैयती जमीन कम्पनीयों को नहीं देनी है। नहीं तो धीरे–धीरेपाटपर खेती तो छोडिये, रहने और पैर धरने की जमीन नहीं बचेगी। अबकी बार असुर भागकर कहाँ जाएँगे?''[११] यांत्रिकीकरण व औद्योगिकरण ने गाँव के गाँव उजाड़ दिये है, गाँव का जीवन उजाड़ दिया है, उपन्यास में लिखा है–''लेकिन बीसवी सदी की हार हमारी असुर जाति की अपने पूरे इतिहास में सबसे बड़ी हार थी। इस बार कथा–कहानी वाले सिंगबोंगा ने नहीं, टाटा जैसी कम्पनियों ने हमारा नाश किया। उनकी फैक्टरियों में बना लोहा, कुदाल, खुरपी, गैंता, खन्ती सुदूर हाटोंतक पहुँच गयें। हमारे गलाये लोहे के

औजारों की पूछ खत्म हो गयी। लोहा गलाने का हजारों–हजारों साल का हमारा हुनर धीरे–धीरे खत्म हो गया''[१२] इससे पता चलता है कि, गाँव का पुश्तैनी धंदा भी बडी–बडी कम्पनीयाँ खत्म कर रही है।

बॉक्साईट की खदान ने किसानों की जमीन निगल ली है, उन्हें किसानों से मजदूर बना दिया है। यह यांत्रिकीकरण का दुष्प्रभाव है। ''मजबूत पाट देवता की छाती पर हल चलाकर हमने खेती शुरू की, किन्तु बॉक्साईट के वैध–अवैध खदान विशालकाय अजगर की तरह हमारी जमीन को निगलता बढ़ता जा रहा है।''[१३] विशालकाय मशीनों के कारण आज किसानों को मजदूर बनने के लिए विवश होना पडा है। उनके पास खेती करणे के लिए खुद की जमीन नही बची है।

हिन्दी उपन्यासों का अध्ययन करने पर यांत्रिकीकरण के दुष्प्रभाव उपन्यासों में काफि हद तक दिखाई देते है। गाँव के लघु उद्योग खत्म होने के कगार पर है। किसान किसानी छोडकर मजदूर बनने के लिए विवश है। शहरीकरण बढ़ रहा है। गाँव अब गाँव नहीं रहा है। सीनियर सिटिजन में अकेलेपन की समस्या निर्माण हुयी है.गाँव का पुश्तैनी धंदा बडी–बडी कम्पनीयाँ खत्म कर रही है। औद्योगीकरण से प्रदूषण की समस्या विकराल रूप लेकर खड़ी है। यांत्रिकीकरण के इन्हीं दुष्प्रभावों का वर्णन हिन्दी उपन्यासकारों ने किया हैं।

सन्दर्भ :

१. आधुनिकता : साहित्य के संदर्भ में गंगा प्रसाद विमल, दिल्ली: दि मैकमिलन कपंनी ऑफ इंडिया लिमिटेड, १९७८, पृ.७३

२. नगरीकरण बनाम आधुनिक बोध, मैथिली प्रसाद भारद्वाज, प्राधिकृत संपा. रमेश कुंतल मेघ, अंक–१, अमृतसर: गुरूनानक देव यूनिवर्सिटी, फरवरी–जुलाई, १९८३, पृ.११

३. कलि कथा : वाया बाईपास, अलका सरावगी, पृ.२१४–१५, आधार प्रकाशन, पंचकूला, १९९८, चतुर्थ संस्करण, २००९.

४. काशी का अस्सी, काशीनाथ सिंह, पृ.१३८, राजकमल पेपर बैक्स, २००२, छठी आवृत्ति, २०१२

५. प्रतिसंसार, मनोज रूपड़ा, पृ.४९, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, २००८.

६. प्रतिसंसार, मनोज रूपड़ा, पृ.८७, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, २००८.

७. दौड़, ममता कालिया, पृ.५, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, २००५, आवृत्ति २०११

८. वही, पृ. ४०

९. वही, पृ. १८

१०.दीवार में एक खिड़की रहती थी, विनोद कुमार शुक्ल, पृ.३९, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, २०१०.

११.ग्लोबल गाँव के देवता, रणेन्द्र पृ.२७, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली २००९, तीसरा संस्करण, २०११

१२.वही, पृ.८३

१३.वही, पृ.८४